Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 03, Issue 02

DOI: 10.46523/jarssc.03.02.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 3.575

स्त्री चिंतन की परम्परा और हिन्दी कविता

रूमा ज़ैदी[1], पूनम लता मिड्ढा[2]

शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, सनराइज विश्वविद्यालय, अलवर, राजस्थान

जीवन चिंतन और साहित्य मानव समाज की एक सतत प्रगतिशील परम्परा है। प्रत्येक समाज जिस प्रकार अपने संस्थान बनाता है। उसके केन्द्र में होता है, मनुष्य। मानव को केन्द्र में रखकर सभी प्रकार की सभ्यतायें एवं संस्कृतिया विकसित होती है और आगे बढ़ती चलती हैं। अतएव सभ्यता एवं संस्कृति के आधार पर मानव समाज की एक प्रगतिशील परम्परा निर्मित होती चलती है।

इस परम्परा में सबसे प्रमुख व संवेदना संम्प्रक्त विषय वस्तु है साहित्य एवं कला।

दुनिया के किसी भी समाज में उसकी प्रगति व उसके वैकासिक स्थिति को परखने के लिए सबसे आसान तरीके होतें हैं उसके साहित्य एवं कलाओं का अवलोकन। उस साहित्य में जो सबसे महत्वपूर्ण होता हैं वो है स्त्री समाज को लक्षित कर लिखा गया साहित्य। समाज में किसी भी वंचित तबके के बारे में जानने के लिए आसान तरीका साहित्य ही होता है। स्त्री जीवन की सबसे सच्ची तस्वीर साहित्य के माध्यम से ही सामने आती है। साहित्य में दर्ज जीवन और समाज की संवेदनाओं में मानव सभ्यता की आधी दुनिया का महज अवलोकन किया जा सकता है। इससे वह समाजा सामने आता है। जो पूरी दुनिया को सम्पूर्णता प्रदान करता है। ये वह साहित्य है जो स्त्री जीवन और उसके समाज को लक्षितकर लिखा गया है। भारतीय साहित्य में स्त्री जीवन को आधार बनाकर अनेक प्रकार के साहित्य लिखे गये हैं और लिखे भी जाते रहे हैं। हिन्दी साहित्य में ऐसे साहित्य की परम्परा काफी विस्तृत है। कहानियों, उपन्यासों व स्त्री आत्म कथाओं के माध्यम से इनको अधिक विस्तार मिला है। इस साहित्य के अलावा जिससे स्त्री चिंतन को रेखांकित किया गया है उसमें हिन्दी कविता का अद्‌वितीय स्थान है विमर्श की बात करें तो इसकी शुरूआत हिन्दी साहित्य में बहुत पहले से दिखाई पड़ती है। महत्वपूर्ण बात यह है कि स्त्री की चेतना सबसे पहले कविता के माध्यम से भी

Received: 01.07.2020 **Accepted:** 15.07.2020 **Published**: 15.07.2020

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 03, Issue 02

DOI: 10.46523/jarssc.03.02.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 3.575

OPEN ACCESS Crossref DOI Prefix 10.46523 Crossref

व्यक्त होती है। यह आदिकाल, मध्यकाल में दिखाई पड़ती है। स्त्री सशक्तिकरण के जो प्रश्न समाज में प्रकट हो रहे हैं साहित्य उनसे निरपेक्ष नहीं रह सकता। हर काल में स्त्रियों के वशीकरण के प्रश्न बदले हैं। आज स्त्रियों, लिंगभेद, महिलाओं पर हिंसा को रोकना, निजी मामलों में संशोधन, महिला स्वास्थ्य, आर्थिक दर आदि में मुद्दों से जूझ रही है, स्त्रियों की समाज की आमगानी घात में जोड़ने में महिला आंदोलन ने प्रमुख भूमिका निभाई है। आज साहित्य में भी महिलाओं के आंदोलन द्वारा उठायें गये मुद्दे प्रमुखता से उभर रहे हैं। यह एक अच्छी खबर है। (क्षमा शर्मा–स्त्रीवादी विमर्शः समाज और साहित्य, एण्ड समाज प्रशासन, नई दिल्ली–2012) इन्हीं मुद्दों को लेकर आज हिन्दी साहित्य में प्रश्न किये जा रहें हैं। उत्तर की तलाश की जा रही है। जो बिन्दु हमेशा से मानव जीवन में स्त्री जीवन को प्रभावित करते हैं, उनकी अभिव्यक्तियाँ सर्वप्रथम लोकगीतों के माध्यम से आमजनमानस में सुनाई पड़ती है।

"लोकगीतों के आये शोधकर्ता– श्री रामनरेश्वर त्रिपाठी ने गहनता से अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला है, कि स्त्रियों के गीतों में पुरूषों का मिलाया हुआ एक शब्द भी नहीं है। स्त्री गीतों की सारी पंक्तिया के ही हिस्से की हैं। यह संभव हो सकता है कि एक–एक गीत की रचनाओं में सौ वर्ष एवं सैकड़ों मस्तिष्क लगें हों पर मस्तिष्क है स्त्रियों के ही यह निर्विवाद है।" (राजेन्द्र यादव, अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य राजकमल प्रभाकर, नई दिल्ली–2011)

स्त्री जीवन की जो अभिव्यक्तियाँ स्त्रीयों के माध्यम से व्यक्त हुई हैं, को अधिक सत्य और सारगर्भिक है। सभी बातें स्त्री जीवन की सहज सच्चाई है, जिसे उन्होंने बड़े की समीप और सटीक ढंग से व्यक्त किया है। आर्थिक रचनाओं लोकगीताओं सभ्यताएं हुई है वह आगे चलकर और गर्भस्पर्शी और हृदयभेदी बन पड़ती हैं। जीवन व चिंतन की बातें धीरे–धीरे अत्यधिक तर्कसंगत व व्यापक बनती है। "आज हमारी परिस्थिति कुछ और भ है। स्त्री न घर का अलंकार बनकर रहना चाहती है और न ही देवी की मूर्ति बनकर प्राण–प्रतिष्ठा चाहती है।" (महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कड़ियाँ, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली–2012) नारीवादी साहित्य व विमर्श का सबसे प्रमुख बड़ा मुददा रहा है। पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था इसमें बाद में सामंतवाद, ब्राह्मणवाद, वर्चस्ववाद, पूंजीवाद, कलावाद आदि, अधिक जटिल प्रश्न जुड़ते चले जाते हैं। समाज व व्यवस्था से जुड़े इन्हीं विविध पहलुओं के परिप्रेक्ष्य में स्त्री विमर्श की धारा आगे बढ़ती है।

Received: 01.07.2020 **Accepted:** 15.07.2020 **Published**: 15.07.2020

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 03, Issue 02

DOI: 10.46523/jarssc.03.02.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 3.575

हिन्दुस्तानी सांस्कृतिक परम्परा में स्त्री बहुत ऊँचा स्थान दिया गया है, यह बात प्रत्येक समाज के लोग कहतें आयें है। लेकिन धरातल पर खास कर साहित्य में इसे सामने जलवा ही समझा गया। हिन्दी साहित्य के आरंभिक दौर में मसलन आदिकाल में उस स्त्री को वस्तु ही समझा गया और जीतने और हारने का भी विषय बनाकर देखा गया। आदिकाल अनेक ग्रन्थ मूलतः रासो काव्यों में ऐसी ही छवि अंकित की गयी है।

"जा घर बिटिया सुन्दरि देखी,

ता घर धरैं वेग तरवारि।"

इसके बाद मध्यकाल में स्वेचता भावना जरूर सामने आती है लेकिन वह बहुत ही अल्प ही रहती है। उस दौर के मुख्यतः भक्तिकालीन पुरूष कवियों ने जरूर कुछ बातें कहीं और स्त्रीमन के अनुरूप ही अपनी बातें रखने की कोशिश की लेकिन वे चाहे कबीर हों या जायसी, सूर हो तुलसी, उस स्त्री की सामाजिक व निज वेदना का ठीक ढंग से रेखांकित नहीं कर पाये। इस दौर में मीरा आंदाल जैसी कवयित्रियों ने अपनी बातें पृसत्तात्मक व सामंती परिवेश को रेखांकित करने की पूरी कोशिश की और निज–वेदना को अपनी पूरी संवेदना व निष्ठा के साथ व्यक्त भी किया इसके बाद रीतिकाल में तो स्त्री के सम्बन्ध में जो कुछ कहा गया वह बाहरी बात थी। यह रूपवादी बात स्त्री के तन को संबोधित करती थी लेकिन उसकी चेतना व वेदना को नहीं। उसके मान्सिक सौन्दर्य से कहीं अधिक उसके शारीरिक श्रृंगार की चर्चा खूब हुई। इस दौर में स्त्री को श्रृंगार व उपयोगी निगाह से देखा गया संवेदना की सामाजिक धरातल से नहीं। वे चाहे देव हों या पद्माकर, मतिराम हों या धनानन्द या फिर चाहे वे बिहारी हों या भूषण, सभी ने तन पर ही नजर रखी मन पर नहीं। चेहरा देखा, आत्मा नहीं। उनकी आँखों की कालिमा में ही खो गये उसके आँखों की लालिमा नहीं देखी, उसकी भ्रुकुटी की वक्रता और कटि के कसाव व जुल्फों के घुमाव में घूम गये उसके धड़कते हृदय क स्पंदन और संवदना को नहीं छू पाये। आगे चलकर भारतीय समाज और व्यवस्था तमाम प्रकार के सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक परिर्वतन के चलते काफी बदलाव की ओर बढ़े। स्त्री जीवन को और अधिक संवेदाशील तरीके से रेखांकित करने की परम्परा आगे बढ़ी। समूचे भारतीय साहित्य के साथ हिन्दी साहित्य में भी एक महत्वपूर्ण परिवर्तन का सिलसिला आरम्भ होता है। वह होता है नवजागरण का काल। इस दौरान साहित्य में अनेक प्रकार की चिंतन पद्धति की

Received: 01.07.2020 **Accepted:** 15.07.2020 **Published**: 15.07.2020

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC)
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre
ISSN: 2582-2004
Volume 03, Issue 02
DOI: 10.46523/jarssc.03.02.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 3.575
Crossref DOI Prefix 10.46523

शुरूआत होती है। अनेक प्रकार के विमर्श बोधी चर्चाएं आरम्भ होती हैं। साहित्य में स्त्री चिंतन की एक तस्वीर उभर कर सामने आने लगती है। यह चिंतन साहित्य में जिस विधा में दर्ज होता है वह कविता इसी कविता में ही स्त्रियों की संवेदनात्मक अभिव्यक्तियाँ सामने आती है।

भारतेन्दु युग और द्विवेदी युग में स्त्रियों की सामाजिक सांस्कृतिक परिस्थिति और शैक्षिक दशा का लेकर रचनायें सामने आती हैं। इस काल में स्त्रियों की स्वाधीनता के प्रश्न प्रमुखता से उठाये जाने लगे लकिन ये सभी आवजे पूरी तरह से उन्मुक्त नहीं थीं। ये बातें बेहद मर्यादित व सीमाबद्ध तरीके से ही सामने आ रहीं थीं। मुक्ति की आकांक्षा उस तरीके से तो मुखरित नहीं हुई लेकिन उसकी सामाजिक–शैक्षिक स्थिति का अंकन आवश्य होता है। यह ध्यान देने वाली बात है कि भक्तिकाल की इक्का–दुक्का महिला रचनाकारों को छोड़ दें तो इतने लम्बे अंतराल व कालखण्ड में कोई स्त्री लेखिका सामने नहीं आती, आदिकाल से लेकर द्विवेदी युग तक।

बींसवी सदी के आरम्भ होने के बाद सुभद्रा कुमारी चौहान और छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा का नाम सामने आता है। भारतेन्दु युग से लेकर छायावाद युग तक स्त्री चिंतन की परम्परा में कोई बड़ा परिर्वतन नहीं दिखाई पड़ता। हाँ एक परिवर्तन आवश्य आता है वह है शिल्प का। अनुभूति के स्तर पर कोई बड़ा बदलाव नहीं दिखाई पड़ता। इसी दौर में नारी को 'अबला', 'श्रद्धा' और 'दुख की बदली' के रूप में चिन्हित किया जाता है। स्त्री में माँ, बेटी पत्नि, प्रेमिका आदि तो देखा गया लेकिन स्त्री में 'स्त्री' को और उस स्त्री में 'इंसान' को ठीक से नहीं देखा गया।

छायावाद के उत्तरार्दध में प्रगतिवादी रचनाओं में स्त्रियों की संवेदनओं को स्पर्श करने के प्रयास होते हैं। इस दौरान स्त्री–जीवन को नये ढंग से देखने और रेखांकित करने का नजरिया देखा जाता है।

स्त्री–विमर्श की मूल्यबोधी व विमर्शकारी परम्परा का ठीक ढंग से अंकन प्रगतिशील आंदोलन के समय से आरम्भ होता है। स्त्रियों को पूर्वकाल में जैसे श्रृंगार व भोग की वस्तु के रूप में रेखांकित किया गया। उस बंधन को रेखांति करने का काम भी किया गया। स्त्रीमन स्वयं को देखने के नजरियें को बदलना चाहता है। धूमिल के शब्दों में:–

Received: 01.07.2020 **Accepted:** 15.07.2020 **Published**: 15.07.2020

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

"ओ नटखट बहिनों

सिंगारदान को छुट्टी दे दो

आइनों से कहो वह कुछ देर अपना अकेलापन घूरता रहे कंघी को झड़े हुए बालों की याद में गुनगुना दोरिवन को फेंक दो वांदिडस की अलगनी पर यह चोरी करने का वक्त नहीं।"

(धुमिल आतिष के अनार सी वह लड़की, कल सुनना मुझे)

हिन्दी कविता में स्त्री अन्य पद होकर बोलना आरम्भ करती है और स्वयं से भी प्रश्न स्वयं से ही नहीं समूची सामाजिक व्यवस्था से होता है।

आधुनिक समाज में और आधुनिकता के इस दौर में स्त्रियों के प्रश्न अत्यधिक गंभीर होकर सामने आते हैं। उसकी कविता उसी की जुबान से निकलती है तो इन बातों का सक्षम प्रमाण प्रस्तुत करती है। आज अनेक प्रकार के प्रश्न हमारे सामने हैं उन सभी प्रश्नों व मुद्दों को संबोधित करने के कार्य कविताओं के माध्यम से हो रहा है। स्त्री विमर्श आज बहुआयामी भी हुआ है। जीवन, समाज और व्यवस्था के अनेक मोर्चे पर जहाँ स्थितियाँ जीवन व समाज अनुकूलन नहीं हैं वहाँ स्त्री–लेखन सक्रिय हो जाती है। उन सभी क्षेत्रों से कविता फूट पड़ रही है। उन सभी विचार बिन्दुओं को दर्ज करने का कार्य हिन्दी कविता कर रही है। जब इस बात की घोषणा हो चुकी है कि सभी समान हैं, किसी भी प्रकार की गैरबराबरी स्वीकार्य नहीं, और हम संवैधानिक स्तर पर इसी को अंगीकृत कर चुकें हैं तो इसको हमारे सामाजिक–सांस्कृतिक व व्यवहारिक धरातल पर उतारने का काम भी हमारा है। इसी की जद्दो–जहद स्त्री लेखन की मूल अवधारणा है।

नारी समाज आज अनेक प्रकार से अपने स्वत्व व अस्मिता के सवालों को लेकर आपके सामने है। वह अपने संघर्ष को लेकर सचेत भी है और समाज के सामने अपने संघर्ष को लेकर खड़ी भी है।

"यह मेरा संघर्ष

तुमसे नहीं

Received: 01.07.2020 **Accepted:** 15.07.2020 **Published**: 15.07.2020

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC)
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre
ISSN: 2582-2004
Volume 03, Issue 02
DOI: 10.46523/jarssc.03.02.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 3.575
Crossref DOI Prefix 10.46523

अपने आप से है।

इसकी दरारों में दफनाई

मेरी देह है

इसकी पतझड़ साख पर अटकी है।

मेरी अजन्मी आत्मा।" (अनामिका पृ०–70)

दुनिया के तमाम देशों में स्त्रीवादी विमर्श को लेकर अनेकशः चर्चाए हुई हैं और हो भी रहीं हैं। आज दुनियाँ के अनंक देश लैंगि–विभेद को अपराध की श्रेणी में रखेन लगे हैं। इन देशों की वैचारिकी का प्रभाव भारतीय चिंतन परम्परा पर भी पड़ा है। भारत जैसे देश में लैंगिक विभेद तो है उसमें पुरूषवादी वर्चस्व का शोषण भी मौजूद है। भारतीय समाज के परिवेश में स्त्री–जीवन बहुआयामी एवं अनेक जटिलताओं से भरा रहा है। अनेक सामाजिक–सांस्कृतिक संस्थाओं से मुक्ति की आकांक्षा में स्त्रियों को जड़तावादी आख्यानों से टकराना पड़ा है। इस संदर्भ में परिवार हो या समाज, संस्कृति हो यह धर्म, सभी से जूझने का नाम ही स्त्री जीवन का संघर्ष है। ऐसी व्यवस्थाओं से टकराने से प्रतिरोध की संस्कृति का निमार्ण होता है। यह एक सृजन का रास्ता है। हिन्दुस्तानी औरत का जीवन इस कविता से समझा जा सकता हैः–

"एक लम्बा सफर तय किया औरत ने

पागलखाने तक का

लेकिन आश्चर्य

आखिरकार उसे श्रमदान मिल ही गया

उसने पाया कि यह भी एक घर था

तीमारदार, चाकरी

और हिदायतों के साथ

Received: 01.07.2020 **Accepted:** 15.07.2020 **Published**: 15.07.2020

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC)
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre
ISSN: 2582-2004
Volume 03, Issue 02
DOI: 10.46523/jarssc.03.02.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 3.575

फर्क सिर्फ इतना था कि

यह उनका घर था" (काव्यानी, इस पौरूषपूर्ण समय में पृ0–69)

समाज में जहाँ बेटी और बेटे को देखने के लिए दो आँखे हैं वहीं उसके प्रतिकार का नजरिया भी मिलेगा अनेक प्रकार के लैंगिक विभेद सामने आते हैं। लैंगिक विभेद जो ब्रह्मणवाद में है। वह मार्क्सवाद में भी है। एक भौतिक लैंगिक विभेद करता है और दूसरा भावनात्मक लैंगिक विभेद। इस अंतर के कारण अनेक प्रकार की समस्याएं व विषमताएं पैदा होती हैं। इस क्रम में चह रचना द्रष्टव्य हैः–

"आखिर क्यों है तुम्हें

हमारे अस्तित्व से इतनी चिढ़

हमारे कोमल सपनों से इतनी नफरत

घर–बार जीन की चाह में छटपटाती

और जन्में से पहले ही

मरने को मजबूर कर दी जाती हम हैं

तुम्हारी अजन्मी बेटियाँ।" (कविता, पाती अजन्मी बेटियों की, जुलाई 2004 पृ0–27)

वास्तविक जीवन में सिद्धान्त से लेकर आचरण तक जो द्ववैध परम्परा है वही असली समस्या है। नारी–जीवन की अनेक वंदीकृत छवियाँ गृहस्त–जीवन में सामने उभर कर आती हैं।

"माँ थी

सबसे बादे में खाने वाली

जिसके लिए दाल नहीं

देयकी में बची थी हलचल

Received: 01.07.2020 **Accepted:** 15.07.2020 **Published**: 15.07.2020

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC)
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre
ISSN: 2582-2004
Volume 03, Issue 02
DOI: 10.46523/jarssc.03.02.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 3.575
Crossref DOI Prefix 10.46523

चुल्लू भर पानी की

और कटोरदानी में रात के चंद्रमा जैसी

रोटी की छाया थी।" (चन्द्रकान्त देवताले, उजाड़ में संग्राहलय, पृ0—77)

धीरे—धीरे परिवर्तन आते हैं शिक्षा के बढ़ने के साथ कई बंधन टूटते हैं लेकिन तमाम प्रकार के बंधनों के टूटने के साथ सभी विपरीत परिस्थितियों का अंत नहीं हो जाता है। इसके साथ ही अनेक प्रकार की समस्याएं भी आती हैं:—

"एक पढ़ी—लिखी औरत

अपनी सारी पढ़ाई के बावजूद

बिता देती है शेष जीवन

व्यवस्था के सो में जीते हुए आगे निकलने की जिद स्त्री जीवन की सुखद सच्चाई भी है। उसने प्रश्न कि किया और उत्तर खोजने का प्रयास थी:—

"क्या तुम जानते हो

पुरूष से भिन्न

एक स्त्री का एकांत

घर प्रेम और जाति से अलग एक स्त्री को उसकी अपनी जमीन

के बारे में बता सकते हो तुम।" (निर्मला पुतुल, अपने घर के तलावा में, क्या तुम जानते हो, पृ0—27)

इस विचार परम्परा में हो रहे अनेक प्रकार के परिवर्तनों को समझना होगा। आज स्त्री—चिंतन की परम्परा समृद्ध और प्रौढ़ हो चली है। विमर्श से अनेक बीच पढ़ने या बहरा करने की चीज नहीं है, व्यापक पाठक तक पहुँचाने पर ही उसकी सार्थकता है। इसी तरह नारीवादी आंदोलन तमाम उपेक्षित, शोषित, बंधित महिलाओं तक पहुँचने पर ही सार्थक होगा और तभी शायद कृ

Received: 01.07.2020 **Accepted:** 15.07.2020 **Published**: 15.07.2020

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 03, Issue 02

DOI: 10.46523/jarssc.03.02.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 3.575

Crossref DOI Prefix 10.46523

त्रिम संभ्रांतता के जाल से मुक्त होकर पहचान सकेगा कि स्त्री स्वाधीनता पर समानात, उसके अधिकार और कर्त्तव्य, उसकी ममता और विद्रोह को कौन सी दृष्टि और दिशा दी जानी चाहिए।" (प्रभाकर क्षत्रिय, सौन्दर्य का तात्पर्य, पृ0–32)

इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि स्त्री–चिंतन की परम्परा कितनी विस्तीर्ण हैं। इसी रास्ते आगे के लक्ष्यों को पूरा करते हुए आगे बढ़ा जा सकता है।

Received: 01.07.2020 **Accepted:** 15.07.2020 **Published**: 15.07.2020

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.